

सूरदास कृत 'भ्रमरगीत सार' में उपालंभ काव्य एवं वात्सल्य वर्णन का आलोचनात्मक अध्ययन

अक्षय राजौरिया

एम ए प्रथम वर्ष -हिन्दी

उच्च शिक्षा उत्कृष्टता संस्थान भोपाल

Received– 26 September - 2026

Accepted– 28 September - 2026

Published– 30 September-2026

Corresponding Author-

अक्षय राजौरिया

एम ए प्रथम वर्ष -हिन्दी

उच्च शिक्षा उत्कृष्टता संस्थान भोपाल

DOI- <https://doi.org/10.67275/SU.2026.041517>

Funding Policy-

'Shodh Utkarsh' is an independent journal and receives no financial support or grant from any public, commercial, or not-for-profit organization.

वित्त पोषण नीति-

'शोध उत्कर्ष' एक स्वतंत्र पत्रिका है। इसे किसी भी सार्वजनिक, वाणिज्यिक या गैर-लाभकारी संगठन से कोई वित्तीय सहायता, अनुदान या फंडिंग प्राप्त नहीं होती है।

Copyright Notice -

© 2026 The Author(s). This work is licensed under a Creative Commons Attribution 4.0 International License (CC-BY 4.0).

कापीराइट सूचना-

© 2026 लेखक। यह कार्य क्रिएटिव कॉमन्स अ Attribution 4.0 इंटरनेशनल लाइसेंस (CC-BY 4.0) के अंतर्गत लाइसेंस प्राप्त है।



संप्रदाय के दीक्षित शिष्य सूरदास ने अपने महाग्रंथ 'सूरसागर' में कृष्ण की जन्म-लीला से लेकर बाल-सखाओं के साथ क्रीड़ा, रासलीला, गोचारण, तथा मथुरा गमन एवं भ्रमरगीत तक का जो जीवंत खाका खींचा है, वह अद्वितीय है। भ्रमरगीत की मूल परंपरा का आख्यान श्रीमद्भागवत पुराण के दशम स्कंध के 46वें एवं 47वें अध्याय में प्राप्त होता है। जब कृष्ण मथुरा चले जाते हैं, तब वे अपने परम मित्र उद्धव को, जिन्हें अपने ज्ञान और योग-मार्ग पर अत्यंत अहंकार था, गोकुल भेजते हैं ताकि वे गोपियों का विरह-ताप शांत कर सकें। परंतु सूरदास ने अपने सूरसागर में केवल पौराणिक आख्यान का अनुवाद नहीं किया, अपितु आचार्य हजारीप्रसाद द्विवेदी के अनुसार, "सूरदास ने भ्रमरगीत प्रसंग में लोक-हृदय की स्वाभाविक रागात्मकता और वाग्विदग्धता का समावेश करके इसे एक मौलिक महाकाव्यात्मक रूप दे दिया है।"

आचार्य रामचंद्र शुक्ल ने सूरसागर के इस प्रसंग में से लगभग 400 उत्कृष्ट पदों को चुनकर 'भ्रमरगीत सार' नाम से एक कालजयी ग्रंथ संपादित किया। यह ग्रंथ मुख्यतः दो विरोधी किंतु परस्पर पूरक भाव-धाराओं पर टिका हुआ है—पहला, गोपियों द्वारा निर्गुण ब्रह्म और उद्धव को दिया गया तीखा उपालंभ (उलाहना); तथा दूसरा, अपने दुलारे कन्हैया के मथुरा चले जाने पर माता यशोदा एवं नंद बाबा के निष्पाप मातृ-पितृ हृदय का विरह-वात्सल्य। प्रस्तुत शोध-पत्र इन्हीं दोनों आयामों का आलोचनात्मक विवेचन करता है।

2. 'भ्रमरगीत सार' में उपालंभ काव्य का आलोचनात्मक अध्ययन—साहित्य शास्त्र में 'उपालंभ' का अर्थ प्रेमपूर्ण शिकायत, उलाहना या व्यंग्य कसना है। जब उद्धव योग, प्राणायाम और निर्गुण-अव्यक्त ब्रह्म का संदेश लेकर गोकुल पहुंचते हैं, तो गोपियों सीधे अतिथियों का अपमान न करने की भारतीय शिष्टाचार मर्यादा का पालन करते हुए, अचानक वहाँ मंडराते हुए एक भ्रमर (काले भौर) को माध्यम बनाकर उद्धव और कृष्ण पर अपने उपालंभों का बाण चलाती हैं।

2.1 निर्गुण बनाम सगुण का उपालंभ—गोपियों अत्यंत सीधे किंतु अचूक लोक-तर्कों द्वारा उद्धव के अमूर्त और अगोचर ब्रह्म की धज्जियाँ उड़ा देती हैं। वे कहती हैं कि जिस ब्रह्म का न कोई रूप

शोध-संक्षेप—हिंदी साहित्य के स्वर्ण युग (भक्ति काल) की सगुण कृष्णभक्ति धारा के शिरोमणि महाकवि सूरदास (1478-1583 ई.) का साहित्य भारतीय रागात्मक चेतना का अक्षय कोष है। आचार्य रामचंद्र शुक्ल द्वारा संपादित 'भ्रमरगीत सार' सूरसागर का वह हृदय-स्थल है जहाँ सगुण भक्ति और निर्गुण ज्ञान, लोक-संवेदना और दार्शनिकता, तथा वक्रोक्ति और भावुकता का अभूतपूर्व द्वंद्व एवं समन्वय घटित होता है। प्रस्तुत विस्तृत शोध-पत्र में 'भ्रमरगीत सार' के दो सबसे महत्वपूर्ण आधार-स्तंभों—'उपालंभ काव्य' (व्यंग्य व उलाहना) तथा 'वात्सल्य वर्णन' (विशेषकर विरह-वात्सल्य) का आलोचनात्मक एवं शास्त्रीय अनुशीलन प्रस्तुत किया गया है।

इस शोध-पत्र में यह विश्लेषित किया गया है कि किस प्रकार गोपियों की वाग्विदग्धता, व्यंग्य-शैली और उपालंभ-विधान ने महाज्ञानी उद्धव के निर्गुण योगमार्ग को परास्त कर लोक-जीवन की निष्काम प्रेमभक्ति की स्थापना की। साथ ही, कृष्ण के मथुरा गमन के उपरांत माता यशोदा एवं नंद बाबा के विरह-वात्सल्य के माध्यम से वात्सल्य रस के उस मर्मस्पर्शी स्वरूप को उद्घाटित किया गया है जो विश्व साहित्य में अप्रतिम है। शोध-पत्र की अकादमिक प्रामाणिकता हेतु आचार्य रामचंद्र शुक्ल, आचार्य हजारीप्रसाद द्विवेदी, डॉ. नगेंद्र, डॉ. रामकुमार वर्मा, डॉ. मुंशीराम शर्मा एवं डॉ. मैनेजर पांडेय की प्रतिष्ठित आलोचनात्मक कृतियों से संख्यांकित एवं पृष्ठ संख्या सहित संदर्भ अंत में तालिका तथा पाठगत रूप में उद्धृत किए गए हैं।

बीज शब्द- सूरदास, भ्रमरगीत सार, उपालंभ काव्य, वात्सल्य वर्णन, विरह-वेदना, गोपियाँ, कृष्ण, यशोदा, भक्ति काव्य, सगुण भक्ति, माधुर्य भाव, वात्सल्य रस, श्रृंगार रस, वियोग श्रृंगार, लोक-संवेदना, मनोवैज्ञानिक चित्रण, भावाभिव्यक्ति, काव्य-सौंदर्य, ब्रजभाषा, सूर काव्य।

1. प्रस्तावना एवं पृष्ठभूमि—हिंदी भक्ति साहित्य में सूरदास का स्थान सूर्य के समान भास्वर है। आचार्य रामचंद्र शुक्ल ने ठीक ही लिखा है—"सूरदास जी बाल-स्नेह और वात्सल्य का कोना-कोना झाँक आए हैं। उनके समान वात्सल्य और श्रृंगार का विशद वर्णन किसी अन्य कवि ने नहीं किया।" अष्टछाप के कवियों में वल्लभ

हैं, न रेखा, न माता-पिता, न पत्नी, उस अनिश्चित और निराकार से प्रेम कैसे किया जा सकता है? वे पूछती हैं:

"निरगुन कौन देस को बासी?"

मधकर कहि समझाइ सौंह दै, ब्रजति साँच न हाँसी।

कौ है जनक, कौन है जननि, कौन नारि, को चेरी?

कैसो बरन, भेष है कैसो, किहि रस में अभिलाषी?"

यहाँ गोपियों का उपालंभ शास्त्रीय शृङ्खला के विरुद्ध मानवीय रागात्मकता की विजय का प्रतीक है। डॉ. रामकुमार वर्मा के अनुसार, "सूर की गोपियाँ दार्शनिक तर्कों में नहीं उलझती, बल्कि अपने हृदय की सहज प्रत्यक्ष अनुभूति के बल पर ज्ञानमार्गी उद्धव को निरुत्तर कर देती हैं।"

2.2 कुब्जा-प्रसंग, कपट एवं श्रीकृष्ण पर उपालंभ- गोपियों का उपालंभ केवल उद्धव के निर्गुण उपदेश तक सीमित नहीं रहता, बल्कि वह मथुरा में बसे कृष्ण और कुब्जा पर भी तीखा प्रहार करता है। गोपियों को लगता है कि मथुरा नगरी ही कपट का केंद्र है और कृष्ण वहाँ जाकर ब्रज के सीधे-सादे प्रेम को भूल गए हैं। वे कहती हैं:

"काले खाँड़े की यह कासी।

जो आवैं सोई कारी ही, तुम कत पतिनि उपासी?"

वे कृष्ण को 'छली', 'माखनचोर', 'मथुरापति' और 'व्यापारी' कहकर उपालंभ देती हैं कि वे ब्रज का अमूल्य प्रेम लेकर बदले में योग रूपी कड़वी ककड़ी (कड़वी ककड़ी सो लागत है यह जोग) भेज रहे हैं। यह उपालंभ गोपियों के अनन्य और एकनिष्ठ प्रेम की गहराई को व्यक्त करता है।

2.3 उद्धव पर व्यंग्य एवं वाग्विदग्धता -

गोपियों का सबसे कलात्मक उपालंभ उद्धव के प्रति है। वे उद्धव को 'बड़भागी' (भाग्यशाली) कहकर वास्तव में उन्हें अभागा सिद्ध करती हैं कि कृष्ण के पास रहकर भी वे प्रेम के रंग में नहीं रंगे। वे कहती हैं:

"ऊधो, तुमहँ अति अनुरागी।

जौ पै तुम आवत यहि मारग, तौ काहे अनुरागी?

ऊधो, जोग ठगौरी ब्रज न बिकैहै।

यह ब्यापार तिहारो ऊधो, ऐसौ ही धरि जैहै॥"

यहाँ 'जोग ठगौरी' (योग रूपी ठगी की सामग्री) और 'व्यापार' जैसे शब्द इस बात के प्रमाण हैं कि सूरदास ने उपालंभ के माध्यम से सामंती और व्यापारिक मनोवृत्ति पर लोक-प्रेम का व्यंग्य कसा है।

3. 'भ्रमरगीत सार' में वात्सल्य वर्णन का आलोचनात्मक अध्ययन - यदि 'भ्रमरगीत सार' का उपालंभ पक्ष गोपियों की बौद्धिक चुटीलेपन और प्रेमानुभूति को दर्शाता है, तो इसका वात्सल्य पक्ष संपूर्ण हिंदी काव्य की सबसे करुण और निश्छल धारा प्रस्तुत करता है। सूरदास को 'वात्सल्य रस का सम्राट' कहा गया है। यद्यपि बाल-लीलाओं में 'संयोग-वात्सल्य' का आधिक्य है, किंतु भ्रमरगीत सार में वात्सल्य 'वियोग-वात्सल्य' (विरह-वात्सल्य) का उच्चतम शिखर स्पर्श करता है।

3.1 माता यशोदा का संदेश एवं निश्छल मातृ-हृदय- जब उद्धव मथुरा लौटने के लिए प्रस्तुत होते हैं, तब माता यशोदा देवकी के नाम एक भावुक और कारुणिक संदेश भेजती हैं। यह पद संपूर्ण विश्व साहित्य में वात्सल्य भावना का शिखर माना जाता है:

"संदेसौ देवकी सौं कहियो।

हौं तौ धाइ तिहारे सुत की, मया करत ही रहियो।

जद्यपि देव जानति तिहरी, तऊ मोहि कहि आवैं।

प्रात उठत मेरे लाल लड़ैतैं, माखन-रोटी भावैं॥"

इस पद का आलोचनात्मक विश्लेषण करते हुए आचार्य रामचंद्र शुक्ल लिखते हैं, "यशोदा का यह कहना कि 'हौं तौ धाइ तिहारे सुत की' (मैं तो तुम्हारे पुत्र की केवल धाय/पालनहार हूँ) मातृ-हृदय की नम्रता, संकोच और अगाध ममता का वह प्रस्फुटन है जहाँ स्वार्थ का लेश मात्र भी नहीं रहता।" यशोदा को चिंता है कि मथुरा के राजसी वातावरण में क्या बालक कन्हैया की पसंद

का ध्यान रखा जा रहा होगा? सुबह उठते ही उसे माखन-रोटी पसंद है, और उबटन तथा गरम पानी देखकर वह भाग जाता है। यह छोटी-छोटी आदतों का स्मरण वात्सल्य रस की सूक्ष्म मनोवैज्ञानिक पकड़ को दर्शाता है।

3.2 नंद बाबा का वात्सल्य एवं सामाजिक विरह-वेदना-सूरदास ने केवल माता यशोदा का ही नहीं, बल्कि पिता नंद बाबा के विरह-वात्सल्य का भी अत्यंत मार्मिक वर्णन किया है। नंद बाबा उद्धव से कृष्ण की कुशल-क्षेम पूछते हैं और चिंता व्यक्त करते हैं कि क्या कृष्ण अपने सखाओं, गायों और ब्रज की गलियों को भूल गए हैं? डॉ. मुंशीराम शर्मा के अनुसार, "सूर का वात्सल्य केवल एकांकी पारिवारिक मोह नहीं है, अपितु वह गोकुल के समूचे पशु-पक्षी, गायों और ग्वालों से जुड़ा हुआ सामाजिक वात्सल्य बन जाता है।" नंद की आँखें कृष्ण के मार्ग को निहारते-निहारते थक गई हैं, जो एक वृद्ध पिता के असहाय वात्सल्य को रूपायित करता है।

4. उपालंभ और वात्सल्य का काव्यात्मक एवं तात्त्विक समन्वय- भ्रमरगीत सार की मूल संरचना उपालंभ (उलाहना) और वात्सल्य रस के अद्वितीय समन्वय से निर्मित हुई है। इन दोनों भाव-सरिताओं का तुलनात्मक विश्लेषण निम्नलिखित बिंदुओं द्वारा समझा जा सकता है:

1. बुद्धि बनाम हृदय का संतुलन: जहाँ गोपियों का उपालंभ तार्किक, वक्रोक्तिपूर्ण और वाग्विदग्ध है (जो बुद्धि और तर्क को चुनौती देता है), वहीं यशोदा और नंद का वात्सल्य पूर्णतः भावुक, कारुणिक और आत्म-समर्पित है (जो सीधे हृदय को झुकता करता है)।

2. अहंकार-भंजन और हृदय-परिवर्तन: गोपियों के तीखे उपालंभों ने उद्धव के ज्ञान और योग के अहंकार को तोड़ा, और यशोदा के निश्छल विरह-वात्सल्य ने उद्धव के हृदय को द्रवीभूत कर दिया। परिणामस्वरूप, जो उद्धव गोकुल ज्ञान का उपदेश देने आए थे, वे मथुरा लौटते समय स्वयं परम भागवत और कृष्ण-प्रेमी बनकर लौटे।

3. सगुण भक्ति का संस्थापन: उपालंभ और वात्सल्य दोनों ही सगुण साकार रूप के बिना संभव नहीं हैं। सूरदास ने सिद्ध कर दिया कि अमूर्त ब्रह्म न तो माँ का दुलार पा सकता है और न ही प्रेयसी का उपालंभ।

4. निष्कर्ष - निष्कर्षतः, महाकवि सूरदास कृत 'भ्रमरगीत सार' केवल मध्यकालीन हिंदी भक्ति साहित्य की ही नहीं, अपितु संपूर्ण विश्व साहित्य की एक अप्रतिम काव्यात्मक निधि है। प्रस्तुत आलोचनात्मक अध्ययन से यह सिद्ध होता है कि इसमें उपस्थित गोपियों का उपालंभ केवल एक साधारण उलाहना या व्यंग्य नहीं है, बल्कि यह निर्गुण-ज्ञान पर सगुण-भक्ति तथा शुष्क योग साधना पर निष्काम लोक-प्रेम की सर्वकालिक दार्शनिक विजय का शंखनाद है। दूसरी ओर, 'भ्रमरगीत सार' में अभिव्यक्त माता यशोदा एवं नंद बाबा का विरह-वात्सल्य वात्सल्य रस की वह पराकाष्ठा है जहाँ पहुँचकर प्रेम स्वार्थरहित, पवित्र और कारुणिक बन जाता है। उपालंभ की बुद्धिसंगत वाग्विदग्धता और वात्सल्य की अनन्य हृदयग्राह्यता का ऐसा प्रांजल एवं जीवंत समन्वय केवल सूरदास जैसे भाव-शिरोमणि एवं वात्सल्य-सम्राट कवि के द्वारा ही संभव था। यह शोध-पत्र सूर के काव्य के इन दोनों शाश्वत पक्षों को अकादमिक एवं समीक्षात्मक धरातल पर पुनर्स्थापित करता है।

6. संदर्भ ग्रंथ सूची -

1. भ्रमरगीत सार लेखक / संपादक: आचार्य रामचंद्र शुक्ल संदर्भित पृष्ठ ४५
2. हिंदी साहित्य का इतिहास लेखक / संपादक: आचार्य रामचंद्र शुक्ल संदर्भित पृष्ठ संख्या: १२५
3. सूरदास लेखक / संपादक: आचार्य हजारीप्रसाद द्विवेदी संदर्भित पृष्ठ ८२
4. हिंदी साहित्य का बृहत् इतिहास (भाग-४) संपादक: डॉ. नगेंद्र एवं डॉ. धीरेन्द्र वर्मा पृष्ठ २१५
5. हिंदी साहित्य का आलोचनात्मक इतिहास सं. डॉ. रामकुमार वर्मा संदर्भित पृष्ठ संख्या: ३१०
6. सूर सौरभ (द्वितीय भाग) लेखक / संपादक: डॉ. मुंशीराम शर्मा संदर्भित पृष्ठ १४५, १५०-१५५
7. भक्ति आंदोलन और सूरदास का काव्य लेखक / संपादक: डॉ. मैनेजर पांडेय संदर्भित पृष्ठ ८५